INTERNATIONAL JOURNAL OF ENHANCED RESEARCH IN EDUCATIONAL DEVELOPMENT (IJERED)
VOL. 1, ISSUE 2, MARCH 2013 ISSN NO: 2320-8708

# बाल-अपराध : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

## डॉ0 अनिल कुमार श्रीवास्तव

**एसोसिएट प्रोफेसर समाजशास्त्र, राजकीयस्नातकोत्तर महाविद्यालय द्वाराहाट (अल्मोड़ा)**

### प्रस्तावना

वर्त्तमान समय में बाल–अपराध की समस्या विकसित और विकासशील दोनों प्रकार के समाजों में एक चुनौती बन कर उभरी है। आज विश्व के समस्त देश अपने यहाँ बढ़ रहे बाल–अपराध से परेशान हैं। यही वजह है कि अक्सर माता–पिता, शिक्षक–समुदाय, पुलिस–प्रशासन, मनोचिकित्सक, सामाजिक–कार्यकर्ता, अपराधशास्त्री, समाजशास्त्री, सरकार, मिडिया आदि, विभिन्न परिचर्चाओं के दौरान बाल–अपराध पर चिन्तन–मनन करते पाये जाते हैं। किशारों में असामाजिक और विचलनकारी व्यवहार का बढ़ना किसी भी स्वस्थ समाज का लक्षण नहीं है। यह समाज के सुख–शान्ति और समृद्धि के लिये खतरे का घंटी के समान है, जो देश के विकास की गति को भी अवरूद्ध करती है। बाल–अपराध की समस्या कोई पृथक समस्या नहीं है वरन् यह सामाजिक परिवर्तन और समाज में असामंजस्य से अभिन्न रूप से जुड़ा है। आधुनिक युग में वैज्ञानिक उपलब्धियों ने हर क्षेत्र में विकास को चरमोत्कर्ष पर पहुँचा दिया है। फलतः समाज की संरचना और उसके प्रकार्यो में भी काफी तीव्र गति से परिवर्तन हुए हैं। तीव्र गति से हो रहे औधोगीकरण, नगरीकरण और वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने विकसित औरविकासशील दे की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक मूल्यों को भी काफी तेजी से बदला है। परम्परागत जीवन–मूल्यों में भी काफी तेजी से बदलाव आया है। भौतिकवादी संस्कृति और उपभोक्तावाद ने स्वच्छन्द विचारधारा और आचरण को बढावा दिया है। तीव्र गति से बढ रही जनसंख्याए नगरों की संख्या में वृद्धिए निर्बाध गतिशीलता, व्यावसायिक गतिशीलता, सांस्कृतिक परिवर्तन, गंन्दी बस्तियों के विकास और भीड़–भाड़ की स्थिति में रहने से नए प्रकार के परिवर्तन हुए हैं। गरीबी, बेरोजगारी और महँगाई ने भी सामाजिक विघटन की प्रक्रिया को बढाया है। आधुनिक युग की इन तेजी सेबदलती सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों ने किशोरावस्था के बच्चों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है। उचित देखभाल और सामाजीकरण के अभाव में बच्चों में असंतुलन की समस्या बढ़ रही है, जिससे व समाज–विरोधी कार्यो की ओर प्रवृत्त हो जाते हैं। बच्चे कोमल पौधे की तरह होते हैं जिनका सफलतापूर्वक फलना एंव फूलना नाजुक पालन–पोषण पर निर्भर करता है। केवल विकसित समाजों में ही नहीं अपितु विकासशील समाजों में भी परम्परागत पारिवारिक ढाँचा बिखर रहा है। जिससे बच्चे माता–पिता और अन्य रिश्तेदारों के स्नेह से वंचित रह जा रहे हैं। बच्चों के ऊपर पहले जैसा परिवार और पड़ोसका नियंत्रणनहीं रह गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि बाल–अपराध की समस्या के लिये किसी एक कारक को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। बहुत सारे कारकों के सम्मिलित प्रभाव ने इस समस्या को गंभीररूप प्रदान किया है। यह किसी समाज के रोगग्रस्त होने का लक्षण मात्र है।अन्यशब्दों मे बाल–अपराध सिर्फ इस बात को सूचित करता है कि समाज और इसके संगठन में कहीं न कहीं कोई खराबी या गड़बड़ी आ गयी है। कुछ दशक पूर्व तक युवा–अपराधियों और बाल–

अपराधियों में कोई भेद नहीं किया जाता था।बाल–अपराधियों को भी युवा–अपराधियों की तरह सख्त से सख्त दण्ड दिया जाता था। आज अपराधी बच्चे को व्यस्क अपराधियों से अलग रखकर देखा जाता है। उन्हें कुसमायोजित और कुनिर्देशित बच्चों के रूप में देखा जाता है, जिन्हें सुधारने और सही रास्ते पर लाने की जिम्मेदारी सरकार और समाज की है। आज बाल–अपराधियों को दण्ड न देकर उनका सुधार एंव पुनर्वास किया जाता है, ताकि वे आगे चलकर समाज के जिम्मेदार नागरिक बन सकें तथा अपराध के दलदल में फँसने से बच सकें। इसके अभाव में उनके व्यस्क अपराधी के रूप में परिवर्तित हो जाने की प्रबल संभावना बनी रहती है, क्योंकि बाल–अपराध वह दरवाजा है जिसके रास्ते से चलकर व्यस्क–अपराध की दुनिया में कदम रखना बहुत आसान हो जाता है।

**बाल-अपराध की समाजशास्त्रीय परिभाषा : -**

बाल–अपराध शब्द की व्याख्या विविध दृष्टिकोणों के आधार पर की जाती रही है जिनमें प्रमुख हैं : वैधानिक दृष्टिकोण, सामाजिक कार्य दृष्टिकोण, मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण, जैव–वैज्ञानिक दृष्टिकोण इत्यादि। वैधानिक दृष्टिकोण, जो कि मानदण्डीय औपचारिकतावाद पर आधारित है, बाल अपराध की विशिष्ट आधार पर व्याख्या करता हैए ताकि पुलिस और न्यायालयों के अन्यायपूर्ण कृत्यों से बाल अपराधी की रक्षा हो सके तथा खतरनाकव्यवहार से भी जनता को बचाया जा सके।समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण अपराधी को उसके सामाजिक समूह का सदस्य मानती है और अपराध को समूह मानदण्डों से विचलन और संगठित जीवन को सरलता से चलाने में बाधक शक्ति के रूप में देखती है। गलिन एंव गिलिन के अनुसार, ''समाजशास्त्र की दृष्टि से बाल–अपराधी एक ऐसा व्यक्तिहै, जिसके व्यवहार को समाज अपने लिये हानिकारक समझता है और वह उसके द्वारा निषिद्धहै।''

**न्यूमेयर के अनुसार**:- ''एक बाल–अपराधी निर्धारित आयु से कम आयु का वह व्यक्ति है जो समाज–विरोधी कार्य करने का दोषी है और जिसका दुराचरण कानून का उल्लघंन है।''

**प्रो. शेल्डन के अनुसार:-** ''बालक द्वारा एक सामान्य सीमा से भी अधिक गम्भीर अपराध करना ही बाल–अपराध है।'' उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि बाल–अपराध के अन्तर्गत बालकों के असामाजिक व्यवहारों को लिया जाता है। बालकों व किशोरों के ऐसे व्यवहार जो लोक–कल्याण की दृष्टि से अहितकर होते हैं, जिससे समाज के व्यवहार नियामक आदेशों एवं आदर्शा का उल्लंघन होताहै।

बाल अपराध व्यवहार की शैली और समय में विविधता प्रदर्शित करता है। प्रत्येक प्रकार का अपना सामाजिक सन्दर्भ होता है। कारण होते है तथा विरोध और उपचार के अलग स्वरूप होते हैं जो कि उपयुक्त समझे जाते हैं।

**हावर्ड बेकर (1966) ने चार प्रकार के बाल अपराध बताएँ है :-**

- (क) वैयक्तिक बाल अपराध

- (ख) समूह समर्थित बाल अपराध
- (ग) संगठित बाल अपराध
- (घ) स्थितिजन्य बाल अपराध

**वैयक्तिकबालअपराध :-** यह वह बाल अपराध है जिसमें एक व्यक्ति ही अपराधिक कार्य करने में संलग्न होता है। और इसका कारण भी अपराधी व्यक्ति में ही खोजा जाता है। इस अपराधी व्यवहार की अधिकतर व्याख्याएँ मनोचिक्सिक समझाते हैं, उनका तर्क है कि बाल अपराध दोषपूर्ण पारिवारिक अन्तक्रिया प्रतिमानों से उपजी मनोवैज्ञानिक समस्याओं के कारण किये जाते हैं। हीले और ब्रोनर (1936) ने अपराधी युवकों की तुलना उन्हीं के अनपराधी सहोदारो से ही और उनके बीच अन्तरों का विश्लेषण किया। उनकी सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह थी कि 13.0 प्रतिशत अनपराधी सहोदारों की तुलना मे 90.0 प्रतिशत अपराधी किशारों का घरेलू जीवन दुःख भरा था और वेअपने जीवन की परिस्थितियों से असन्तुष्ट थे, उनकी अप्रसन्नता की प्रकृति भिन्न थी।

**समूह समर्थित बाल अपराध :-** इस प्रकार के अपराध में बाल अपराध अन्य बालकों के साथ में घटित होता है और इसका कारण व्यक्ति के व्यक्तित्व या परिवार में नही मिलता, बल्कि उस व्यक्ति के परिवार व पड़ोस की संस्कृति में होता है। थ्रेशर शॉ और मैके के अध्ययन भी इसी प्रकार के बाल अपराध की बात करते हैं, मुख्य रूप से यह पाया गया कि युवक अपराधी इसलिऐ बना क्योंकि वह पहले से ही अपराधी व्यक्तियों की संगति में रहता था, बाद में सदरलैंड ने इस तथ्य को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किये। जिसने विभिन्न संपर्क के सिद्धान्त का विकास किया।

**संगठित बाल अपराध :-** इसमें वे अपराध सम्मिलित हैं जो औपचारिक रूप से संगठित गिरोहों द्वारा किये जाते हैं, इस प्रकार के अपराधों का विश्लेषण सन् 1950 के दशक में अमरीका में किया गया था तथा अपराधी उपसंस्कृति की अवधारणा का विकास किया गया था। यह अवधारणाउन मूल्यों और मानदण्डों की ओर संकेत करती है जो समूह के सदस्यों के व्यवहार को निर्देशित करते हैं, अपराध करने के लिए डन्हें प्रोत्साहित करते हैं, इस प्रकार के कृत्यों पर उन्हें प्रस्थिति प्रदान करते हैं और उन व्यक्तियों के साथ उनके संबधो को स्पष्ट करते है जो समूह मानदण्डों से बाहर के समूह होते हैं।

**स्थितिजन्य अपराध :-** स्थितिजन्य अपराध की मान्यता यह है कि अपराध गहरी जड़े नहीं रखता और अपराध के प्रकार और इसके नियंत्रित करने के साधन अपेक्षाकृत बहुत सरल होते हैं, एक युवक की अपराध के प्रति गहरी निष्ठा के बिना अपराधी कृत्य में संलग्न हो जाता है, यह या तो कम विकसित, अन्तः नियंत्रण के कारण होता है या परिवार नियंत्रण में कमजोरी के कारण या इस विचार के कारण कि यदि वह पकड़ा भी जाता है तो भी उसकी अधिक हानि नहीं होगी। डेविड माटजा ने इसी प्रकार के अपराध का सदंर्भ दिया है।

VOL. 1, ISSUE 2, MARCH 2013 ISSN NO: 2320-8708

**बाल अपराधियों का वर्गीकरण :-**विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न आधरों पर बाल–अपराधियों का वर्गीकरण किया गया है। उदाहरणार्थ इन्हें 6 श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है।

1. अशाध्यिता उदाहरणार्थः देर रात तक बाहर रहना,

2. स्कूल से भागना,

3. चोरी,

4 सम्पत्ति की क्षति,

5. हिंसा एवं

6. यौन–अपराध

ईनर और पॉक ने अपराधों के प्रकार के आधार पर पाँच प्रकारों मे वर्गीकरण किया हैं

1. छोटे–छोटे उल्लंघनः यातायात संबधी नियमों का उल्ल्ंघन

2. वृहत उल्लघनः वाहन चोरी संबधी

3. सम्पत्ति सम्बन्धी

4. मादक व्यसन

5. शारीरिक हानि

राबर्ट ट्रोजानोविज (1973) ने अपराधियों को आकस्मिक, असामाजिकतापूर्ण, आक्रामक, कदाचनिक और गिरोह संगठित में वर्गीकत किया है।

मनोवैज्ञानिकों ने बाल अपराधियों को उनके वैयक्ति गुणों या व्यक्तित्व की मनोवैज्ञानिक गत्यात्मकता के आधार पर चार भागों में बाँटा है, मानसिक रूप से दोषपूर्ण मनस्तापी, तणिकामय पीडित और स्थितिजन्य।

**बाल अपराध के कारण :-** बाल अपराध एक सामाजिक समस्या है, अतः इसके अधिकांश कारण भी समाज में ही विद्यमान हैं, इसके कारणों को निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

**पारिवारिक कारण :-** परिवार बच्चों की प्रथम पाठशाला है, जहाँ वह अपने माता–पिता एवं भाई–बहनों के व्यवहारों से प्रभावित होता है। जब माता–पिता बच्चों के प्रति अपने दायित्वो का निर्वाह करने में असमर्थ रहते हैं, तो बच्चों से भी श्रेष्ठ नागरिक बनने की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। परिवार से संबधित कई कारण बालक को अपराधी बनाने में उत्तरदायी है।
**भौतिक वंशानुक्रमण :-** बच्चों के शरीर और स्वास्थ्य का संबध उसके वंशानुक्रमण से भी है जो कि उसकी शारीरिक और सामाजिक भूमिकाओं को प्रभावित करता है, इटली के अपराधाशास्री लोम्ब्रोसो ने तो अपराधी प्रवृति को व्यक्ति की शारीरिक विशेषताओं से जनित ही माना था। किन्तु वर्तमान में अपराध शास्त्र में इस अवधारणा का बहिष्कार किया गया। बर्ट ओर गिलिन ने अपने अध्ययनों मे बाल अपराध को वंशानुक्रमण से संबधित नहीं पाया।

**माता-पिता द्वारा तिरस्कार :-**माता–पिता द्वारा बच्चे के विकास और अन्तः करण पर सीधा प्रभाव डालते हैं। अंतविवेक की कमी होने के कारण शत्रुता की भावना के साथ मिलकर आक्रामकता को जन्म देती है, ऐण्ड्री (1960) ने भी माना है कि बाल अपराधी अपराधियों की अपेक्षा माता–पिता का प्यार कम पाते हैं।

**परिवार की आर्थिक दशा :-**बच्चों की आवश्यकताओं को जुटा पाने में असमर्थ परिवार भी बच्चे में असुरक्षा पैदा कर सकता है ओर उस नियंत्रण की मात्रा को प्रभावित कर सकता है जो परिवार बच्चे पर डाल सकता है क्योंकि वह भौतिक समर्थन तथा सुरक्षा परिवार के बाहर खेजता है। पीटरसन और बेकर ने बताया कि अपराधियों के परिवार प्रायः भौतिक रूप से कमजोर होते हैं, जो कि बाल अपराधी के स्वंय के प्रत्यक्षण को प्रभावित कर सकते हैं और उसको घर से भागने में सहायक हो सकते है।

**भीड़-भाड़ युक्त परिवार :-**आधुनिक समाज में नगरीकरण के परिणामस्वरूप व्यक्ति को रहने का पर्याप्त स्थान नहीं मिल पता, बड़े परिवार को भी बहुत छोटे स्थान में रहना पड़ता है। इसके कारण माता–पिता न तो बच्चों पर पूर्ण ध्यान दे पाते हैं, न ही कोई आन्तरिक सुरक्षा उन्हें मिल पाती है, मनोरंजन के साधन भी उपलब्ध नहीं होते हैं, अतः बच्चे अपराध की ओर प्रवृत हो जाते हैं, माता–पिता स्वंय ही उन्हें बाहर भेजना पंसद करते है, जहाँ बच्चे अपराधी बालकों की संगति प्राप्त करते हैं और स्वयं भी अपराधी बन जाते हैं।

**व्यक्तिगत कारण :-**पारिवारिक कारणों के अतिरिक्त स्वंय व्यक्ति में ही ऐसी कमियां हो सकती है जिनसे कि वह अपराधी व्यवहार को प्रकट करें।

**शारीरिक कारक** :- जब बालक किसी प्रकार की शरीरिक अक्षमता का शिकार होता है तो उसमें हीनता की भावना विकसित हो जाता है वे अपराध की ओर प्रवृत हो जाते है, सिरिल, बर्ट, हीले तथा ब्रोनर एवं ग्लूक आदि ने बाल अपराधियों के अध्ययन मे ऐसा पाया, हट्टन ने अनेक प्रकार के

शारीरिक दोषों जैस बहरापन, स्थाई रोग, शरीरिक अपंगता, बुद्धि की कमी को बाल अपराध का कारण माना है।

**मनोवैज्ञानिक कारण :-**मनौवैज्ञानिकों ने मानसिक असमानताओं को भी बाल अपराध के लिए उत्तरदायी माना हैं, मानसिक कारणों में दो कारक महत्वपूर्ण हैं

**मानसिक अयोग्यता :-**गोडार्ड, हीले एवं ब्रोनर आदि ने अध्ययनो द्वारा यह पाया कि बाल अपराधी मानसिक रूप से पिछडे होते है, क्लेश एवं चासो ने कोलम्बिया विश्विद्यालय में सन् 1935 में अपना एक लेख ''दी रिलेशन बिटविन मोरलिटी एण्ड इण्टलेक्ट प्रकाशित किया जिसमें दर्शाया कि कमजोर मस्तिष्क वाले परिवारों का झुकाव अपराध की ओर अधिक था, मानसिक पिछड़ेपन के कारण उनमें तर्क शक्ति का अभाव होता है।

**भावात्मक अस्थिरता और मानसिक संघर्ष :-**भावात्मक अस्थिरता के कारण भी बच्चे अपराधी हो जाते है, सिरिल बर्ट, हीले एवं ब्रोनर ने अध्ययनों में पाया कि प्रायः बाल अपराधी स्वयं को असुरक्षित अनुभव करते है एवं मानसिक संघर्ष से ग्रसित रहते हें, इसी कारण वे अपराधों की ओर प्रवृत होते हैं।

**सामुदायिक कारण :-**जिस समुदाय में बच्चा रहता है यदि उसका वातावरण अनुपयुक्त है तो वह बालक को अपराधी बना सकता है, सामुदायिक कारकों में से कुछ प्रमुख का हम यहाँ उल्लेख करेंगे।

**पड़ोस :-पड़ोस का प्रभाव नगरीय क्षेत्रों में अधिक दिखाई देता है, परिवार के अलावा बच्चा अपना अधिकतर समय पड़ोस के बच्चों के साथ व्यतीत करता है, पड़ोस अपराध में व्यक्तित्व सम्बन्धी आवश्यकताओं में व्यवधानबनकर, संस्कृतिक-संघर्ष करके तथा असामाजिक मूल्यों को पोषित करने में सहायक हो सकता है, भीड-भाड़ वाले तथा अपर्याप्त मनोरंजन की सुविधाओं वाले पड़ोस बच्चों की खेल की प्राकृतिक प्रेरणाओं की उपेक्षा करता हैऔर अपराधी समूहों के निर्माण को प्रोत्साहित करता है, पड़ोस में गृह सस्ते होटल, आदि भी अपराधिक गतिविधियाँ के जन्म स्थल होते हैं।**

**स्कूल :-विद्यालय के वातावरण का प्रभाव बच्चों पर अत्यधिक पड़ता है। अध्यापकों का व्यवहार, स्कूल के साथी छात्रों व अध्यापकों के साथ सम्बन्ध, पाठ्यक्रमों की कठोरता, मनोरंजन का अभाव, अयोग्य छात्रों की पदोन्नति आदि कुछ ऐसे कारण है जो बच्चों के कोमल मस्तिष्क को प्रभावित करे उसे अपराधी बना देते हैं। कम अंक प्राप्त करने या फेल होने पर बच्चों को स्कुल छुड़वा दिया जाता है या अध्यापकों द्वारा उनका उत्पीड़न किया जाता है या छात्रों द्वारा मजाक उड़ाया जाता है इससे वे हीनता की भावना से ग्रसित होते हैं और अपराध की ओर प्रवृत हो जाते है।**

**चलचित्र और अश्लील साहित्य :-अनैतिकता, मद्यपान, धूम्रपान से भरे चलचित्र और कामुक पुस्तकें बच्चों के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़त हैं। कई बार वे अपराध के तरीके भी सीखते हैं, हमारे देश के कई भागों मे चोरी, सेंधमारीऔर अपहरण आदि सिनेमा के तरीकों का प्रयोग करने के जुर्म में अनेक बालक पकड़े जाते हैं। वे दावा करते हैं कि उन्होंने सिनेमा से अपराध के तरीके सीखे थे। चलचित्र सरलता से धन प्राप्त करने की इच्छा जागृत करके, इन उपलब्धिया ें के लिय विधियाँ सुझाकर और साहस की भावना भरकर, यौन भावनाएँ भड़का कर और दिवास्वप्न दिखाकर भी बच्चों में अपराधी व्यवहार की अभिरूचि का विकास करते हैं।**

**अपराधी क्षेत्र :-**अपराधी क्षेत्र में निवास का भी अपराधी प्रवृति से घनिष्ठ संबध है, वेश्याओं के अड्डे, जुआरियों, शराबियों के पास निवास स्थान होने पर बच्चों के अपराधी होने के अवसर अधिक रहते हैं क्योंकि बच्चों मे अनुकरण एवं सुझाव –ग्रहरणशीलता अधिक होने के कारण अपराधी प्रवृतियों के सीखने की संभावना रहती है, शॉ और मैनेंने ने यह बताया कि कई स्थान बच्चों को रखने की दृष्टि से सुरक्षित नहीं हैं, शहर केन्द्र एवं व्यापारी क्षेत्र में अपराध अधिक होते हैं, ज्यों–ज्यों शहर के केन्द्र से परिधि की ओर जाते हैं अपराध की दर घटती जाती है, हीले एवं ब्रोनर की मान्यता है कि अपराध के प्रचलित प्रतिमानों से प्रभावित होकर गंदी बस्तियों के बच्चे अपराध करते हैं। उपयुक्त कारकों के अतिक्तिक बाल अपराध के लिए कुछ अन्य कारक भी उत्तरदायी है जैसे मूल्यो के भ्रम, सांस्कारिक भिन्नता एवं संघर्ष, नैतिक पतन, स्वंतत्रता में वृद्धि, आर्थिक मन्दी आदि। स्पष्ट है कि बालकको अपराधी बनाने मे किसी एक कारक का ही हाथ नहीं होता वरन् अनेक कारकों की सह–उपस्थितियों ही बालक को अपराधी बनाने में योग देती है।

**आयु एंव व्यवहार :-**बाल–अपराधियों के निर्धारण में आयु एंव व्यवहार को काफी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। किस आयु–समूह के बच्चे को बाल–अपराधी की श्रेणी में रखा जाये, इस विषय पर अलग–अलग देशों में अलग–अलग मत है।अमेरिका जैसे देशों में जहाँ 7 वर्ष की उम्र का बालक अपराधी माना जा सकता है, वहाँ भारत के सन्दर्भ में किसी बालक को तब तक अपराधी नहीं माना जा सकता ,जब तक कि बालक इतना न समझे ले कि वह जो कार्य कर रहा है वह क्या है, और उस कार्य के क्या परिणाम हो सकते है? इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए केन्द्रिय बाल अधिनियम, 1960 जो सभी केंद्र शासित प्रदेशों पर लागू है, उसके अनुसार बाल–अपराधी 14 से 18 वर्ष की उम्र का हो सकता है, या माना जायेगा।

प्रत्येक देश में बाल–अपराध की आयु–सीमा भिन्न–भिन्न होने के कारण बाल–अपराधियों की संख्या में भी अन्तर पाया जाता है।हालाँकि बाल–अपराध की निम्नतम आयु–सीमा अधिकांश देशों एंव भारतवर्ष में भी लगभग 7 वर्ष ही माना गया है। परन्तु, अधिकतम आयु–सीमा विभिन्नदेशों में अलग–अलग है। उदाहरण के लिये अमेरिका के अधिकतर राज्यों में यह 18 वर्ष है, किन्तु इंग्लैंड में 17 वर्ष और जापान में 20 वर्ष है। भारत में बाल–अपराध के निर्धारण में निम्नांकित तथ्य महत्वपूर्ण है:-

**1.**भारत में 7 वर्ष से कम उम्र के बच्चे के द्वारा किया गया कानून–विरोधी व्यवहार बाल–अपराध की श्रेणी में नहीं आता है।

**2.**भारत में बाल न्याय अधिनियम,1986 जो कि अक्टूबर 1987 से लागू किया गया, के अनुसार 16 वर्ष तक के आयु के लड़कों एंव 18वर्ष तक की आयु की लड़कियों को अपराध करने करने पर बाल–अपराधी की श्रेणी में सम्मिलित किया गया है।बाद में बाल न्याय अधिनियम, 2000 के लागू हो जाने से लड़के और लड़कियों दोनों के लिये यह उम्र–सीमा 18 वर्ष तय कर दी गयी है।
3. केवल आयु ही नही बल्कि बाल–अपराध के निर्धारण में अपराध की गम्भीरता को भी महत्वपूर्ण पक्ष माना गया है। जैसे–7 से 18 वर्ष के लड़के एंव लड़कियों द्वारा कोई भी ऐसा अपराध न किया गया हो जिसके लिये राज्य मृत्यु–दण्ड अथवा आजीवन कारावास देता हो, जैसे–हत्या, देशद्रोह, घातक आक्रमण आदि तो वह बाल–अपराधी की श्रेणी में आयेगा।व्यवहारबाल–अपराध के निर्धारण में आयु के साथ–साथ व्यवहार भी एक महत्वपूर्ण पक्ष है।

**भारत में बाल अपराध :-**

भारत में बाल–अपराध से सम्बन्धित आँकड़े स्पष्ट नहीं है। भारत में सन् 2000 तकबाल–अपराध से सम्बन्धित आँकड़े बाल–अपराध न्याय अधिनियम 1986 अनुसार एकत्र किये गये, जिसके अनुसार 16 वर्ष से कम उम्र के लड़के और 18वर्ष से कम उम्र की लड़कियो को बाल–अपराधी की श्रेणी में रखा गया था। सन् 2000 मेंबाल–अपराध न्याय अधिनियम में संशोंधन किया गया और लडके तथा लडकियो दोनो के उम्र18 वर्ष कर दिया गया। इससे बाल–अपराध से सम्बन्धित आँकडे काफी कुछ बदल गये। साथही बाल–अपराध से सम्बन्धित बहुत सारे मामले पुलिस में विभिन्न कारणों से दर्ज ही नहींकराये जाते है। बाल–अपराध से सम्बन्धित अनुपयुक्त आँकडो के लिये पुलिस द्वाराबाल–अपराधियों को पकड़ने में अरूचि, उनका अनुप्रयुक्त प्रशिक्षण, अक्षमता एंव जनता के द्वारासहयोग का अभाव भी उत्तरदायी है। अतः प्रतिवर्ष भारत में बाल–अपराध से सम्बन्धित जितनेमुकदमे दर्ज किये जाते है, बाल–अपराधियों की वास्तविक संख्या साधारणतः उनसे कई गुणाअधिक होती है।

**भारत में बाल-अपराध का प्रतिशत :-**

भारतीय दण्ड संहित के अन्तर्गत दर्ज अपराधों में 1997 से2000 तक, बाल–अपराधियों का प्रतिशत लगभग 0.5 प्रतिशत ही पाया गया। बाल–अपराध काप्रतिशत सन् 2001 में बढ़कर 0.9प्रतिशत हो गया। सन् 2002 में इसमें थोड़ी बहुत वृद्धि हुईयह बढ़कर 1.0 प्रतिशत हो गया। परन्तु, सन् 2003, 2004 और 2005 में लगभग 1.0 प्रतिशतपर ही स्थिर रहा। बाल–अपराध के प्रतिशत में दर्ज वृद्धि के लिये बहुत हद तक जिम्मेदारबाल–अपराध न्याय अधिनियम, 2000 का वह प्रावधान है जिसमें बाल–अपराध की परिभाषा में18 वर्ष से कम उम्र के लड़को को शामिल कर लिया गया है। जबकि

पहले लड़को के लियेआयु सीमा 16 वर्ष ही थी। जहाँ तक अपराध दर का सवाल है, बाल– अपराध की दर 1999और 2000 तक लगभग 0.9 प्रतिशत रहा। सन् 2001 से 2005 तक यह क्रमशः1.6, 1.8, 1.7,1.8 और 1.7 के दर से घटते–बढते रहा।

भारत के रजिस्ट्रार जनरल द्वारा प्रतिशत आँकडों के अनुसार जहाँ सन् 1995 में भारतीय दंडसंहिता के तहत बाल–अपराध के 9,766 मामले दर्ज हुए, वहीं सन् 2005 में बाल–अपराध के18,939 मामले दर्ज हुए जो कुल दर्ज अपराध (18, 22, 602) का लगभग एक प्रतिशत है। वहींसन् 2012 में बाल–अपराध के 27936 मामले दर्ज हुए जो कुल दर्ज अपराध (2387188) कालगभग एक प्रतिशत है।

भारत में कुल अपराध, बाल –अपराध (संख्या एवं प्रतिशत)

| वर्ष | कुल अपराध प्रति 1 लाख | बाल–अपराध | कुल अपराधोंमें बाल–अपराध | जनसंख्या मेंप्रतिशत अपराध का दबाव |
|---|---|---|---|---|
| 1991 | 13,85,757 | 61,019 | 4.4% | 8.8% |
| 1996 | 14,05,835 | 55,887 | 4.0% | 7.3% |
| 2001 | 16,78,375 | 12,588 | 0.8% | 1.5% |
| 2005 | 18,22602 | 18939 | 1.0% | 2.0% |
| 2012 | 23,87188 | 27,936 | 0.8% | 1.5% |

स्रोतराष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो

**2012 में बाल अपराध में विभिन्न राज्यों की स्थिति:-**

जहाँ तक भारत के विभिन्न राज्यों में दर्ज बाल–अपराधियों की संख्या को देखें तो,मध्य–प्रदेश (6,488), महाराष्ट्र (6,630), छत्तीसगढ़ (2,502), गुजरात (2,406), राजस्थान (2,551)और आँध्र–प्रदेश (1,186), का स्थान ऊपर आता है। सन् 2012 में केवल इन छः राज्यों मेंभारतीय दंड संहिता के अन्तर्गत 74.8 प्रतिशत बाल–अपराध दर्ज किये गये है। इन दर्जअपराधों में ज्यादातर मामले चोरी (4,846), चोट या क्षति पहुँचाना (2,979), सेंधमारी (2,270),और दंगा–फसाद (934), के थे, जो कि कुल मिलाकर भारतीय दंड संहिता के अन्तगर्त दर्जसमस्त बाल–अपराधों का लगभग 58.2 प्रतिशत है।

जहाँ तक बाल–अपराधियों द्वारा बलात्कार के अपराध का मामला है, सन् 2012 में कुल586 मामले भारत वर्ष में दर्ज किये गये। इसमें सबसे ज्यादा मामले मध्य प्रदेश (145) में दर्जहुए। इसके बाद छत्तीसगढ़ (86) का स्थान रहा। ये कुल बलात्कार के मामलों का क्रमशःलगभग 24.7 प्रतिशत तथा

VOL. 1, ISSUE 2, MARCH 2013 ISSN NO: 2320-8708

14.7 प्रतिशत है। उसी प्रकार चोरी के अधिकांश मामले महाराष्ट्र(1251) में दर्ज हुए जो कि पूरे भारत में दर्ज चोरी के मामले (4846) का 25.8 प्रतिशत है।इसके बाद क्रमशः मध्य–प्रदेश (564) तथा आँध्रप्रदेश (517) का स्थान है और इनका प्रतिशतक्रमशः 11.6प्रतिशत तथा 10.7 प्रतिशत है।जहाँ तक राजस्थान का सवाल है, सन् 2005 में 1,324 बाल–अपराध के मामले यहाँदर्ज हुए, जो कि भारत में दर्ज कुल बाल–अपराध (18,939) का 7.0 प्रतिशत है। इनमें हत्या के 33, हत्या के प्रयास के 56, अपहरण के 14, जुआ के 21, उत्पाद अधिनियम के 27, अवैध हथियार रखने के 09, नारकोटिक ड्रग्स के 07 मामले दर्ज हुए। हालाँकि ज्यादातरमामले चोरी, चोट या क्षति पहुँचाने, से और दंगा–फसाद आदि के ही दर्ज किये गये।

**भारत में बाल-अपराध की विशेषताएँ :-**

वैसे तो दुनिया के हर देश में बाल–अपराध की कुछ सामान्य विशेषताएँ देखने कोमिलती है, परन्तु साथ ही उनमें विभिन्नता भी पायी जाती है। जहाँ तक भारत का सवाल है,हमारे यहाँ बाल–अपराध की निम्नलिखित विशेषताएँ देखने को मिलती हैं :-

(1) हमारे देश मे कस्बों और ग्रामों की तुलना में नगरों और महानगरों में बाल–अपराध अधिक होतेहै। बड़े–शहरों और महानगरों जैसे दिल्ली, चेन्नई, मुम्बई, कोलकाता, चण्डीगढ़, लखनऊ,जयपुर, कानपुर, हैदराबाद आदि में बाल–अपराध अधिक होते है। शहरों और महानगरों का भीड़–भाड युक्त वातावरण, गन्दी बस्तियाँ, अश्लील एंव अपराधी चलचित्र, मादक द्रव्यों एंवनारकोटिक ड्रग्स की उपलब्धता, विलासपूर्ण जीवन, बेकारी, एंव नितान्त गरीबी, अपराधीउप–संस्कृति आदि बाल–अपराध को प्रोत्साहित करते हैं।

(2) लड़को में लड़कियों की तुलना में बाल–अपराध अधिक पाये जाते हैं। भारत केरजिस्ट्रार–जनरल द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार 1995 में बाल–अपराध के कुल 14,542मामले दर्ज हुए, जिनमें लडकियों के द्वारा किये गये बाल–अपराध का प्रतिशत 22.6रहा। हालाँकि सन् 2005 में कुल 30,606 बाल–अपराध दर्ज हुए जिनमें लड़कियों द्वारा किये गयेबाल–अपराध का प्रतिशत घटकर 6.3 पर आ गया। वहीं सन् 2012 में कुल 35,465बाल–अपराध दर्ज हुए जिनमें लड़कियों द्वारा किये गये बाल–अपराध का प्रतिशतघटकर 2.3 पर आ गया। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि भारत में ज्यादातरबाल–अपराधी लड़के ही होते है। इसका मुख्य कारण यह भी है कि हमारे देश में लड़कियों परसामाजिक नियन्त्रण अधिक होता है, उन्हें घर से बाहर जाने की और उन्मुक्त जीवन जीने कीस्वतन्त्रता कम मिलती हैं, अपनी दिनचर्या घर तक ही सीमित रखनी पड़ती है। जबकि लड़कोंपर इस तरह की पांबदियाँ कम लगी होती है, वे बाह्य जीवन में अधिक भाग लेते हैं, मुक्तवातावरण में रहते है, शारीरिक दम–खम भी ज्यादा होता है, और गलत संगति का ज्यादाअधिकार भी वही होते हैं।

(3) भारत में अधिकतर बाल–अपराध आर्थिक प्रकृति के होते है। उदाहरण के लिये बाल–अपराध केज्यादातर मामले चोरी, सेंधमारी, झगड़े–फसाद, लूट–मार, हत्या एंव राहजनी आदि के दर्ज होतेहै। 1995 में दण्ड संहिता के अन्तर्गत कुल संज्ञेय अपराधों में से सबसे अधिकसम्पति सम्बन्धी थे – जैसे : चोरी – 29.0 प्रतिशत, सेंधमारी 13.2 प्रतिशत, लूटमार 0.8 प्रतिशतऔर डकैती 0.6 प्रतिशत। इसका मुख्य कारण हमारे यहाँ पायी जाने वाली गरीबी, बेकारी,परिवार की छिन्न–भिन्न अवस्था, गन्दी बस्तियाँ, अकाल, बाढ़, महँगाई आदि के है।
(4) बाल–अपराध व्यक्तिगत रूप से कम किये जाते है। ज्यादातर बाल–अपराध गिरोहके साथ मिलकर किये जाते हैं। गिरोह द्वारा उन्हें संरक्षण एंव प्रशिक्षण दोनों प्राप्त होता है।

(5) शिक्षित बालकों की तुलना में अशिक्षित बालकों द्वारा अधिक अपराध किये जाते है। भारत मेंपकड़े जाने वाले बाल–अपराधियों में औसत रूप से 42 प्रतिशत अशिक्षित तथा 52 प्रतिशतप्राथमिक,माध्यमिक एंव सैकण्ड्री तक शिक्षित होते हैं।

(6) अधिकांश बाल–अपराध 12 से 16 वर्ष की आयु में ही किये जाते है। हालाँकि सन् 2000 मेंपारित बाल–अपराध न्याय अधिनियम में बाल–अपराधियों की उच्च सीमा 18 वर्ष कर देने से 16से 18 वर्ष तक के बालकों द्वारा किये गये बाल–अपराधों का प्रतिशत (54-9) प्रतिशत सबसेज्यादा हो गया है (सन् 2012की गणना के अनुसार)। 12-16 वर्ष के आयु–समूह में सन् में2012 में 40.1 प्रतिशत तथा 7-12 वर्ष के आयु–समूह में 5.0 प्रतिशत बाल–अपराधी दर्ज कियेगये हैं।

**बाल अपराधियों के उपचार की विधियाँ :-**

**मनोचिकित्सा :-**यह मनौवैज्ञानिक साधनों से संवेगात्मक और व्यक्तित्व संबधी समस्याओं का निदान करती है, यह बाल अपराधी के विगत जीवन में कुछ महत्वपूर्ण व्यक्तियों के विषय में भावनाओं ओर अभिधारणाओं को बदलकर उपचार करती हैं। जब बच्चें के संबध प्रारम्भिक अवस्था में अपने माँ–बाप से अच्छे नहीं होते, तो उसका संवेगात्मक विकास अवरूद्ध हो जाता है, परिणामस्वरूप अपने परिवार के भीतर ही सामन्य तरीकों से संतुष्ट न होकर वह अपनी बाल आकांक्षाओं को संतुष्ट करने के प्रयत्न में अक्सर आवेगी हो जाता है। इन आकांक्षाओंएवं आवेगों की संतुष्टि असामाजिक व्यवहार का रूप धारण कर सकती है। मनोचिकित्सा के माध्यमसे अपराधी को चिकित्सक द्वारा स्नेह और स्वीकृति के वातावरण में विचरण करने दिया जाता है।

**यथार्थ चिकित्सा :-**यथार्थ चिकित्सा इस विचार पर आधारित है कि अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति न कर पाने वाले व्यक्ति अनुत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार करते हैं, यथार्थ चिकित्सा का उद्देश्य अपराधी बालक के जिम्मेदारी से काम करने में सहायता प्रदान करना अर्थात् असामाहिक क्रियाओं से बचाना है। यह विधि व्यक्ति के वर्तमान व्य वहार का अध्ययन करती है।

**व्यवहार चिकित्सा :-**इसमें नवीन सीखने की प्रक्रियाओं के विकास द्वारा बाल अपराधी के सीखे हुए व्यवहार मे ंसुधार लाया जाता है। व्यवहार के पुरस्कार या दण्ड द्वार बदला जाता है, नकारातमक प्रबलन निषेधात्मक व्यवहार (अपराधी क्रियाओं) को कम करेगा जबकि सकरात्मक प्रबलन (जैसे पुरस्कार) सकरात्मक व्यवहार को बनाए रखेगा। व्यवहार को बदलने में दोनों ही प्रकार के कारकों का प्रयोग किया जा सकता है।

**क्रिया चिकित्सा :-**कई बच्चों में समूह स्थितियो मे प्रभावी ढंग से मौखिक संवाद करने की क्षमता नहीं होती, क्रिया चिकित्सा विधि में बच्चों को उनमुक्त वातावरण में कुछ न कुछ कार्य करवाये जाते हैं। जहाँ वह अपनी आक्रामकता की भावना को रचनातमक कार्यों में, खेल या शैतानी में अभिव्यक्त कर सकता है।

**परिवेश चिकित्सा विधि :-**यह ऐसा वातावरण पैदा करती है जो सुविधाजनक अर्थपूर्ण परिवर्तन तथा संजोषजनक समायोजन प्रदान करता है, यह उन लोगों के लिये प्रयोग किया जाता है, जिनका विचलित व्यवहार जीवन की विषम स्थितियों के प्रतिक्रियास्वरूप होता है।
उपर्युक्त विधियों के अतिरिक्ति बाल अपराधियों को उपचार में तीन और विधियों का प्रयोग भी किया जाता है :

1. व्यक्तिगत समाज कार्य अर्थात् कुसमायोजित बच्चे को उसकी समस्याओं से निपटने में सहायता करता है। व्यक्तिगत समाजिक कार्यकर्ता परिवीक्षा अधिकारी कारगार सलाहकार हो सकता है।
2. व्यक्तिगतसलाह अथार्त अपराधीबालक को उसकी तुरन्त स्थिति को समझना और अपनी समस्या का समाधान करने के लिये पुनर्शिक्षित करना
3. व्यवसायिक सलाह अर्थात् बाल अपराधी को उसके भावी जीवन के चुनाव में सहायता करना है।

**बाल अपराध को रोकने के उपाय :-**

बाल अपराधों को रोकने के लिये वर्तमान में दो प्रकार के उपाय किये गए हैं प्रथम उनके लिए नए कानूनों का निर्माण किया गया है ओर द्वितीय सुधार संस्थाओं एव स्कूलों का निर्माण किया गया है जैसे उन्हें रखने की सुविधाएँ हैं, यहाँ हम दोनों प्रकार के उपायों का उल्लेख करेंगे।

**कानूनी उपाय :-**बाल अपराधियों को विशेष सुविधा देने ओर न्याय की उचित प्रणाली अपनाने के लिये बाल–अधिनियम और सुधारालय अधिनियम बनाए गए है। भारत मे बच्चों की सुरक्षा के लिए 20वीं सदी की दूसरी दशाब्दी में कई कानून बनें सन् 1860 में भारतीय दण्ड संहिता के भाग 399 व 562 में बाल अपराधियों को जेल के स्थान पर रिफोमेट्रीज में भेजने का प्रावधान किया गया। दण्ड विधान के इतिहास में पहली बार यह स्वीकार किया कि बच्चों को दण्ड देने के बजाच उनमें सुधार किया जाए एवं उन्हें युवा अपराधियों से पृथक रखा जाए।

संपूर्ण भारत के लिए सन् 1876 में सुधारालय स्कूल अधिनियम बना जिसमें 1897 में संशोधन किया गया, यह अधिनियम भारत के अन्य स्थानों पर 15 एवं बम्बई में 16 वर्ष के बच्चों पर लागू होता था, इस कानून में बाल–अपराधियों को औद्योगिक प्रशिक्षण देने की बात भी कही गयी थी, अखिल भारतीय स्तर के स्थान पर अलग–अलग प्रान्तों मे बाल अधिनियम बने, सन् 1920 में मद्रास, बंगाल, बम्बई, दिल्ली, पंजाब में एवं 1949 में उत्तरप्रदेश मै और 1970 में राजस्थान मे बाल अधिनियम बने, बाल अधिनियमों में समाज विरोधी व्यवहार व्यक्त करने वाले बालकों को प्रशिक्षण देने तथा कुप्रभाव से बचाने के प्रयास किये गए, उनके लिये दण्ड के स्थानपर सुधार को स्वीकार किया गया। 1986 में बाल न्याय अधिनियम पारित किया गया जिसमें सारे देश में एक समान बाल अधिनियम लागू कर दिया गया। इस अधिनियम के अनुसार 16 वर्ष की आयु से कम के लड़के व 18 वर्ष की आयु से कम की लड़की द्वारा किए गए कानूनी विरोधी कार्यो को बाल अपराध की श्रेणी में रखा गया। इस अधिनियम में उपेक्षित बालकों तथा बाल अपराधियों को दूसरे अपराधियो के साथ जेल मे रखने पर रोकलगा दी गई, उपेक्षित बालकों को बाल गृहों का अवलोकन गृहों में रखा जाएगा। उन्हें बाल कल्याण बोर्ड के समक्ष लाया जाएगा जबकि बाल अपराधियों को बाल न्यायलाय के समक्ष। इस अधिनियम में राज्यों को कहा गया कि वे बाल अपराधियों के कल्याण और पुनर्वास की व्यवस्था करेंगे।

**बाल न्यायालय :-**भारत में 1960 के बाल अधिनियम के तहत बाल न्यायालय स्थापित किये गये है। सन् 1960 के बाल अधिनियम का स्थान बाल न्याया अधिनियम 1986 ने ले लिया है। इस समय भारत के सभी राज्यों मे बाल न्यायालय है। बाल न्यायालय मे एक प्रथम श्रेणी का मजिस्ट्रेट, अपराधी बालक, माता–पिता, प्रोबेशन अधिकारी, साधारण पोशक मे पुलिस, कभी–कभी वकील भी उपस्थित रहते हैं, बाल न्यायालय का वातावरण इस प्रकार का होता है कि बच्चे के मष्तिष्क में कोर्ट का आंतक दूर हो जाए, ज्यों ही कोई बालक अपराध करता है तो पहले उसे रिमाण्ड क्षेत्र में भेजा जाता है और 24 घंटे के भीतर उसे बाल न्यायालय के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है, उसकी सुनवाई के समय उस व्यक्ति को भी बुलाया जाता है जिसके प्रति बालक ने अपराध किया। सुनवाई के बाद अपराधी बालकों को चेतवनी देकर, जुर्माना करके या माता–पिता से बॉण्ड भरवा कर उन्हें सौंप दिया जाता है अथवा उन्हें परिवीक्षा पर छोड़ दिया जाता है या किसी सुधा र संस्था, मान्यता प्राप्त विद्यालय परिवीक्षा हॉस्टल में रख दिया जाता है।

**सुधारात्मक संस्थाएँ :-**बाल अपराधियों को रोकने का दूसरा प्रयास सुधारात्मक संस्थाओं एवं सुधरालयों की स्थापना करने किया गया है जिनमें कुछ समय तक बाल अपराधियों को रखकर प्रशिक्षण दिया जाता है, हम यहाँ कुछ ऐसी संस्थाओं का उल्लेख करेंगें –

- **रिमाण्ड क्षेत्र या अवलोकन** -जब बाल अपराधी पुलिस द्वारा पकड़ लिया जाता है तो उसे सुधारात्मक रख जाता है। जब तक उस पर अदालती कार्यवाही चलती है, अपराधी इन्हीं सुधरालयों में रहता है। यहाँ पर परिवीक्षा अधिकारी बच्चे की शारीरिक व मानसिक स्थितियों का

VOL. 1, ISSUE 2, MARCH 2013 ISSN NO: 2320-8708

अध्ययनकरता हैं उन्हें मनोरंजन, शिक्षा एवं प्रशिक्षण आदि दिया जाता है ऐसे गृहों में बच्चें से सही सूचनाएँ प्राप्त की जाती हैं जो वे न्यायाधीश के सम्मुख देने से घबराते है। भारत में दिल्ली एवं अन्य 11 राज्यों में रिमाण्ड होना है। अब इनका स्थान सम्प्रेक्षण गृहों ने ले लिया है।

- **प्रमाणित या सुधारत्मक विद्यालय** - प्रमाणित विद्यालय में बाल अपराधियों को सुधार हेतु रखा जाता है। इन विद्यालयों को सरकार से अनुदान प्राप्त ऐच्छिक संस्थाओं चलाती है। इन स्कूलों में बाल अपराधियों को कम से कम तीन वर्ष और अधिकतम सात वर्ष की अवधि के लिये रखे जाते है। 18 वर्ष की आयु के बाल अपराधी के बोस्टले स्कूल के स्थानान्तरित कर दिये जाते हैं। इन स्कूलों में सिलाई, खिलौने बनाने, चमड़े की वस्तुएँ बनाने और प्रशिक्षण दिया जाताहै। प्रत्येक प्रशिक्षण कार्यक्रम दो वर्ष के लिए होता है, बच्चों को स्कूल से ही कच्चा माल प्राप्त होता है और उसके द्वारा निर्मित वस्तुओं को बाजार में बेच दिया जाता है और लाभ उसके खाते में जमा कर दिया जाता है। जमा की गई धनराशि एक निश्चित मात्रा तक पहुँचने के बाद स्कूल के बच्चें के केवल राज्य के उपयोग के लिए ही वस्तुओं का उत्पादन करना होता है। बच्चों के 5वें दर्जे तक की बुनियादी शिक्षा भी दी जाती है वर्ष के अन्त में उसको विद्यालय निरीक्षक द्वारा संचालित परीक्षा में भी भाग लेना होता हैं। यदि कोई बाल पाँचवी कक्षा के बाद भी पढ़ना चाहता है तो उसे बाहर के किसी विद्यालय में प्रवेश दिला दिया जाता है।

बोस्टल स्कूल इस प्रणाली के जन्मदाता एल्विन रेगिल्स ब्राद्रूस थे, यहाँ उन्हीं बालको को रखा जाता है जिसकी आयु 15 से 21 वर्ष तक की होती है। उन्हें यहाँ प्रशिक्षण एवं निर्देशन दिये जाते हैं तथा अनुशासन में रखकर उसका सुधार किया जाता है। अवधि समाप्त होने, अच्छे आाचरण का आश्वासन देने एवं भविष्य में अपराध न करने का वचन देने पर अपराधी को इस विद्यालय से मुक्त किया जाता है। ये स्कूल अपराधी का समाज से पुनः सांमजस्य कराने में योग देते है।

- **परिवीक्षा होस्टल** -यह बाल अपराधियों के परिवीक्षा अधिनिमय के अन्तर्गत् स्थापित उन बाल अपराधियों के आवासीय व्यवस्था एवं उपचार के लिए होते है जिन्हें परिवीक्षा अधिकारी की देखरेख में परिवीक्षा पर रिहा किया जाता है। परिवीक्षा हॉस्टल निवासियों को बाजार जाने की तथा अपनी इच्छा का काम चुनने की पूर्ण स्वंतत्रता होती है। विभिन्न देशों की भाँति भारत में भी बाल अपराधियों को सुधारने के लिये प्रयास किये गये हैं और बाल अपराध की पुनरावृति में कमी आयी है फिर भी इन उपायों में अभी कुछ कमियाँ हैं जिन्हें दूर करना आवश्यक है। बालक अपराध की ओर प्रवेश नहीं हो, इसके लिए आवश्यक है कि बालकों को स्वस्थ मनोरंजन के साधन उपलब्ध कराये जाँए, अश्लील साहित्य एवं दोषपूर्ण चलचित्रों पर रोक लगायी जाए, बिगड़े हुए बच्चें को सुधारने में माता–पिता की मदद करने हेतु बाल सलाकार केन्द्र गठित किये जायें तथा सम्बन्धित कार्मिकों को उचित प्रशिक्षण दिया जाए, संक्षेप मे बाल अपराध की रोकथाम के लिए सरकारी एजेन्सियों (जैसे समाज कल्याण विभाग) शैक्षिक संस्थाओं, पुलिस, न्यायपालिका, सामाजिक कार्यकताओं तथा स्वैच्छिक संगठनों के बीच तालमेल की आवश्यकता है।

VOL. 1, ISSUE 2, MARCH 2013 ISSN
NO: 2320-8708

## निष्कर्ष

बाल–अपराध की उत्पत्ति काफी जटिल और अन्तःसम्बन्धित कारकों का परिणाम है,जिसकी प्रकृति बहुत हद तक व्यक्तिगत होती है। प्रत्येक बाल–अपराधी अपने आप में एकसामाजिक अथवा मनोवैज्ञानिक रोगी होता है। रोग की प्रकृति हर बालक में अलग–अलग होतीहै। जोन्स; ने ठीक ही कहा है कि बाल–अपराध शून्य में पैदा नहीं होता। दरअसलयह किसी देश के सामाजिक जीवन का ही हिस्सा है और जैसे–जैसे सामाजिक संगठनबदलते हैं, इसकी प्रकृति भी बदल जाती है। यह हर देश और हर काल में पाया जाता है।अतःइसके निदान का उपाय भी देश और काल–विशेष की परिस्थितियों के अनुकूल ही होनाचाहिए।

## संदर्भग्रंथ सूची

[1]. Gillin& Gillin.1945."Criminology and Penology" (3rd Ed.) New York: Appleton Century
[2]. Neumayer, Martin H.1961. „Juvenile Delinqueny in Modern Society", New York
[3]. Sheldon and Glueck.1950. „Unravelling Juvenile Delinquency", Cambridge,
[4]. Kumari, Manju. 2000.'भारत में बाल अपराध'] Printwell Publishers, Jaipur, P.4.
[5]. Ahuja, Ram & Ahuja, Mukesh.2006. 'विवेचनात्मक अपराधशास्त्र'] Rawat publications, Jaipur, P.116.
[6]. Sharma, Virendra Prakashan.2006. 'समकालीन भारत में सामाजिक समस्याएँ, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, P.59.
[7]. Juvenile Justice Act, 1986
[8]. अपराध संबंधी भारत सरकार की रिपोर्टें;
[9]. बर्ट, सी : दि यंग डेलिंक्वेंट; 1925
[10].हूटन :क्राइम ऐंड दि मैन; 1939